# हिंदी सजल का शिल्प–विधान

14

**चौखे सिंह**
*शोधार्थी (हिंदी विभाग)*
*गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स महाविद्यालय, मुरादाबाद (उ.प्र.)*
*एम. जे. पी. रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय बरेली,*

**प्रो. सीमा अग्रवाल**
*पी.एच.डी. शोध निर्देशिका (हिंदी विभाग)*
*गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स महाविद्यालय, मुरादाबाद (उ.प्र.)*
*एम. जे. पी. रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय बरेली,*

*सारांश*

*सजल हिंदी गीतिकाव्य की सद्यः प्रवर्तित विधा है जिसके प्रवर्तक महाकवि प्रो॰ अनिल गहलौत, पी–एच॰डी॰ (हिंदी), मथुरा (उ॰प्र॰) है। सन् 2016 को 5 सितम्बर को इसकी विधिवत घोशणा हुई थी। आज यह विकास के नए सौपान चूम रही है। राष्ट्रीय स्तर पर इसके 8 सजल समारोह हो चुके हैं। इसका भावपक्ष एवं कलापक्ष अतीव सम्पन्न है। कई हजार की संख्या में आज इससे सजलकार जुड़े हैं। सौ से अधिक संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। इसका भविष्य उज्ज्वल हैं।*

'सजल' का भावपक्ष और कलापक्ष अत्यंत सम्पन्न है। आज असंख्य साहित्यकार सजल–सृजन में रत हैं। कारण इसके अभिव्यंजना–शिल्प ने पाठकों के मन को अपनी ओर आकृष्ट किया है। संस्कृत में रचित वेदों की ऋचाएँ, श्लोक और प्राकृत की वज्जाएँ तथा दोहा–मुक्तकों के रूपबंध में इसका उत्स देखा जा सकता है। ध्यातव्य है ''किसी भी काव्य का 'भावपक्ष' उसके 'अन्तः सौन्दर्य' का द्योतक होता है और 'कलापक्ष' उसके 'बाह्य सौन्दर्य' की अभिव्यंजना करता है। जिस काव्य के ये दोनों पक्ष समान रूप से प्रबल और प्रौढ़ होते हैं, वही सफल काव्य कहलाता है।''[1] आइए! हिंदी गीतिकाव्य की सद्यः जन्मी नव विधा 'सजल' के अभिव्यंजना–शिल्प के विविध उपकरणों का विवेचना एवं विश्लेषण करते हैं। अभिव्यजना–शिल्प के प्रमुख कारक हैं–बिम्ब, प्रतीक, अलंकार, छंदवलय और काव्य– भाषा। 'सजल' में क्रमशः इनका प्रयोग देखें–

**'सजल' में बिम्ब विधान–**

काव्य में बिम्ब भावों को तरलता एवं गहनता प्रदान करने में सहायक होते हैं। जो भावबोध को जागृतकर तदनुकूल मानस में शब्द–चित्र अंकित कर देती है। अतः 'बिम्ब' को एक 'अलंकृत ऐन्द्रिय चित्र' कहें तो अनुचित नहीं।''[2] बिम्बों की इन्हीं विशेषताओं के कारण बिम्बों की अनेकानेक श्रेणियाँ होती हैं। यथा–जो बिम्ब, दृश्य भर उपस्थित करते हैं, उन्हें 'दृश्यचित्र'; जो रूपक–उपमा के आधार पर निर्मित होते हैं; उन्हें 'अलंकृत–बिम्ब'; जो मानस में विशेष प्रकार के भावों का चित्र अंकित करते हैं, उन्हें 'मानस बिम्ब'; जो भावों की गहनता–गम्भीरता का चित्र अंकित करते हैं, उन्हें 'सान्द्र बिम्ब' आदि की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। इसी प्रकार 'प्राकृतिक', 'आधुनिक' या 'वैज्ञानिक–बिम्ब' भी कहे जाते हैं।[3] आइए! हिंदी सजलकारों की रचनाओं में निर्मित बिम्बों के कुछ स्थल दृश्टव्य हैं। एक **'दृश्य बिम्ब'** देखें–

''रूप बदलकर क्रूर भेड़िए, घुस़आए दरबार!
घात लगाकर बैठ गए कुछ, राजमहल के द्वार।।
राजाजी ने ली अँगडाई, हुए भेड़िए मस्त!
शीश झुकाकर राजाजी को, किया बहुत सत्कार।।''[4]

–डॉ॰ महेश 'दिवाकर' : सजल–136

**'मानस बिम्ब'** देखें–

''थम गई जिन्दगी, स्वप्न काले हुए।
पाँव बैठे हैं जंजीर डाले हुए।।
फेरकर मुँह चले सुख सभी छोड़कर।
आ गए दर्द घर से निकाले हुए।।''[5]

–डॉ॰ अनिल गहलौत : सजल–4

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17SI01.14

**'अलंकृत बिम्ब'** का यह उद्धरण देखें–

''रूप धरा का बदला–बदला, मौसम ने ली है अँगड़ाई!
पुष्प जड़ित आँचल धरती का, बहकी–बहकी है पुरवाई।।
घर–आँगन, उपवन मकरंदित, पी–कहँ–पी–कहँ रटे पपीहा!
आम्रमंजरी से आच्छादित, हर्षित है पूरी अमराई।।
पंख कटे कातर पंछी–सम, पीड़ा बाँच रहे हैं जंगल!
करने को उपचार स्वयं का, घायल धरा तनिक सुस्ताई।।''[6]

**–सुश्री सुनंदा झा 'सीप' : सजल–1**

**सजल–विधा 'प्रतीक विधान' में–**

मेरी दृष्टि में जिस माध्यम के द्वारा कवि की 'अनुभूति' सफल और प्रेषणीय बन जाती है, उस 'प्रेषणीयता' को ही 'प्रतीक' की संज्ञा दी जाती है।10 वस्तुतः प्रतीकीकरण मानव का सहज स्वभाव है। मानव की प्रगति का सारा इतिहास प्रतीकों से परिपूर्ण है। प्रतीकों के बल से ही काव्यानुभूति को सशक्त स्वर, भाषा को नयी प्राणशक्ति और काव्य को एक अपूर्व मनोहरता प्राप्त हुई है। अतः'प्रतीक' काव्य में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करने में सिद्ध हो गए हैं। प्रतीकों की इस महत्ता के कारण ही उनके अनेक भेदोपभेद किए गए हैं। 'प्रतीक' प्रायः अपने भाव के अनुरूप ही प्रस्तुत किए जाते हैं। सामान्यतः 'प्रतीक' दो प्रकार के होते हैं–**1. परम्परागत प्रतीक, 2. नवीन प्रतीक!** इनके भी अनेक भेदापेभेद किए जा सकते हैं। वस्तुतः 'वर्ण्य विषय' की दृष्टि से प्रतीकों के मुख्यतः चार भेद किए गए हैं, जो प्रायः सर्वमान्य हैं–

1. प्राकृतिक प्रतीक
2. सांस्कृतिक प्रतीक
3. दैनिक जीवन से सम्बद्ध प्रतीक
4. सैद्धान्तिक प्रतीक

आइए! हिंदी के सजलकारों की सजल–रचनाओं में प्रतीक–विधान की स्थिति देखें–

**1. प्राकृतिक प्रतीक–**

इसके अन्तर्गत प्रकृति से सम्बद्ध उपकरण आते हैं। इसके कुछ उद्धरण देखें–

''चमक रहे **रवि, चन्द्र, सितारे।**
देख रहे निज दृष्टि पसारे।।
पिता–सरीखा खड़ा **हिमालय।**
निर्मल निर्झर चरण पखारे।।
नृत्य कर रही **प्रकृति–वधूटी!**
राम–आरती विश्व उतारे।।''[7]

**–डॉ॰ महेश 'दिवाकर' : सजल–1**

उपर्युक्त उद्धरणों में रेंखाकित शब्दावली 'प्राकृतिक प्रतीक' के रूप में प्रयुक्त हुई है। प्रायः सभी सजलकारों की सजल रचनाओं में ''प्राकृतिक प्रयोग'' देखने मिलते हैं। ये प्रतीक सजलों में प्रचुरता से आए हैं।

**2. सांस्कृतिक प्रतीक–**

इसके अन्तर्गत संस्कृति, धर्म, इतिहास एवं साहित्य से सम्बन्धित प्रतीक आते हैं। इनके कुछ प्रयोग देखें–

''**भैरवी** के **राग** से डरते नहीं।
हम शवों के **बाग** से उरते नहीं।।
हम हैं वंशज त्यागमूर्ति **दधीचि** के!
अस्थियों के त्याग से उरते नहीं।।
हो गए हैं **बुद्ध** सब कुछ त्यागकर!
अब दुखों की आग से उरते नहीं।।''[8]

**–दिनेश रोहित चतुर्वेदी : सजल–1**

वस्तुतः सजलों में से प्रतीक प्रचुरता से आए हैं!

**दैनिक जीवन से गृहीत प्रतीक–**

साहित्यकार दैनिक क्रिया–कलापों को भी कला–चेतना से उद्‌दीप्त करता रहा है, इसीलिए, सामान्य जीवन के उपकरण भी प्रतीकात्मक रूप धारण करके अन्य गीति–विधाओं की तरह सजलों में भी उनके काव्य–सौंदर्य का अभिवर्द्धन करने में सहायक हुए हैं

और युगीन विसंगतियों, विशमताओं एवं भौतिक चकाचौंध को भी व्यक्त करते रहे हैं। आइए! हिंदी सजलों में 'दैनिक जीवन से सम्बद्ध प्रतीकों' के प्रयोग स्थल देखें–

''दिखी राह में फिर कठिनाई!
**शूलों** वाली बिछी **चटाई**।।
रूप मोह का रोज बदलता!
बनी न कोई अभी **दवाई**।।
आपस में ही तू–तू, मैं–मैं!
**बिल्ली** चाटे **दूध–मलाई**।।''[9]

**–अवधेश गुप्त 'नमन' : सजल–3**

**घ. सैद्धान्तिक प्रतीक–**

इसके अन्तर्गत विज्ञान, दर्शन और राजनीति–संदर्भों से गृहीत प्रतीक होते हैं जिनमें वैज्ञानिक, दार्शनिक और राजनीतिक सिद्धान्तों का प्रतीकात्मक विधान रहता है। आइए हिंदी सजल विधाओं में इस प्रकार के प्रतीकों के कुछ प्रयोग देखें–

''सदा न कोई रहता है!
ढलता सूरज कहता है।।
कैसी भी तुम नींव रखो!
किला झूंठ का ढहता है।।''[10]

**– निशेषजार 'तृषित' : सजल–2**

**सजल में अलंकार विधान–**

'अलंकार विधान' कविता के 'कला पक्ष' की एक विशिष्टता है। अलंकारों की योजना में हिंदी के सजलकार किसी दौड़ में शामिल नहीं हुए हैं अपितु सजल–सृजन के समय सहज और स्वाभाविक रूप में जो भी अलंकार उनकी सजलों में अनायास आ गए हैं, उन्हें प्रयुक्त होने दिया है। सजलकार अलंकारों के पीछे भागे नहीं है। वस्तुतः 'शब्दालंकारों' और 'अर्थालंकारों' की उभयनिष्ठ योजना सजल रचनाओं में यत्र–तत्र दिखाई देती है। आइए! कुछ सजलकारों की रचनाओं में 'अलंकार–विधान' के कतिपय उद्धरण देखें–

**क. शब्दालंकार–**

सजल–रचनाओं में शब्दालंकारों की योजना प्रचुरता के साथ हुई हैं। यद्यपि यह सहज एवं स्वाभाविक रूप से हुई है। यथा–'शब्दालंकारों' के कुछ उद्धरण देखें–

''**राम**–प्राण हैं, **राम**–आत्मा, **राम** हमारे जीवन–धन!
राम बिना सब व्यर्थ कल्पना, **राम** प्रेम हैं सत् चिंतन।।
बालक के मृदुहास **राम** हैं, भोलेपन में **राम** बसें!
**राम सादगी–सहज–सरलता**, करूणाकर हैं अभिनन्दन।।''[11]

**–डॉ॰ महेश 'दिवाकर' : सजल–42**

**ख. अर्थालंकार–**

काव्य में जहाँ अर्थ के द्वारा काव्य–सौन्दर्य में अभिवृद्धि की जाती है, वहाँ 'अर्थालंकार' होता है। इसके अनेकानेक भेदोपभेद होते हैं। सजलकारों की कुछ सजल रचनाओं में प्रयुक्त 'अर्थालंकारों' की प्रयोग देखें–

**उपमा अलंकार–** 'उपमा अंलकार' का प्रयोग सजलों में प्रचुरता से हुआ है। यह सजलकारों का प्रिय अलंकार है, यथा–

''बारूदो में **सहमी–सी**!
बैठी दुनिया सारी है।।''[12]

**–'विजय राठौर : सजल–92**

अस्तु, 'उपमा अलंकार' का प्रयोग प्रचुरता से सजलों में हुआ हैं।

**रूपक अलंकार–**

हिन्दी के अन्य रचनाकारों की भाँति 'रूपक अलंकार' भी सजलकारों का प्रिय अलंकार हैं, सजलों में इसका प्रयोग प्रचुरता से देखा जा सकता है–

''**भय का उन्नत–रवि अस्त** हुआ!
**आतंकी–दानव** पस्त हुआ।।''[13]

**–हरवेन्द्र सिंह गौर : सजल–3**

''गहरी है **संत्रास–नदी** यह!
**तमसासुर** को मरना होगा।।
**मन–गगरी** खाली–खाली है।
इसमें मधुरस भरना होगा।।
**भस्म स्वार्थ की लंका** होगी!
**मायामृग** को मरना होगा।।''[14]

**–डॉ॰ रामसनेही लाल शर्मा 'यायावर' : सजल–5**

**उत्प्रेक्षा अलंकार–**

जहाँ वस्तु, हेतु व फल में संभावना व्यक्त की जाती है, वहाँ 'उत्प्रेक्षा अलंकार' होता है। यह अलंकार भी सजलकारों की रचनाओं में प्रचुरता से आया है। यथा, कुछ उद्धरण देखें–

''मात–पिता हैं देवता, **मानो** ये जगदीश!
इनको खुश रक्खा अगर, जीतोगे संसार।।''[15]

इसी प्रकार, अनेकशः उद्धरण 'उत्प्रेक्षा अलंकार' के सजल–काव्य से दिए जा सकते हैं।

**अतिश्योक्ति अलंकार–**

'अतिश्योक्ति अलंकार' का भी प्रचुर प्रयोग हिंदी की सजल–रचनाओं में हुआ है। यथा कुछ उद्धरण देखें–

''किस तरह आकाश मुट्ठी में समाता है?
सिंधु–सा मन बिंदु–सा बनकर दिखाता है।।
सोच की संकीर्णता का दायरा देखो!
जो सगा था, दुख पड़ा तो मुँह छिपाता हैं।''[16]

**–डॉ॰ अनिल गहलौत : सजल–39**

**वीप्सा अलंकार–**

वीप्सा अलंकार का भी सजलों में यत्र–तत्र प्रयोग हुआ है। यथा–

''घिर आए फिर बादल काले!
देखो! इनको कौन संभाले?
करने लगा पवन मनमानी!
खोलो! बंद अधर के ताले।।''[17]

**–अवधेश गुप्त 'नमन' : सजल–14**

**सजल में छंद विधान–**

सर्वप्रथम 'अग्निपुराणकार' ने श्लोक को 'मुक्तक' माना है। तत्पश्चात्, संस्कृत के अन्य परवर्ती आचार्यों ने भी 'श्लोक' को 'मुक्तक' कहा है। लब्ध प्रतिष्ठ सजलकार विजय राठौर जी ने **'छंदों की लहरों' में तैरती 'सजल–2'** नामक 'सजल–संग्रह' में सजल–विधा के 'छंद विधान' के बारे में लिखा है–''सजल हिंदी गीतिकाव्य की एक नई विधा है। इसका प्रयोजन हिंदी को खिचड़ी भाषा बनने से बचाना और हिंदी की सामर्थ्य को दिखाना है। सजल की उत्पत्ति सनातन छंदों से हुई है। दोहे की द्विपदिक–संरचना उक्ति वैचित्र्य और गागर में सागर भरने जैसी संक्षिप्तता सजल के लिए उपयुक्त है।''[18] सजलकार विजय राठौर ने आगे लिखा है–''मापनीयुक्त सजलों में मापनी के अनुसार ही मात्रा विन्यास जरूरी है चूँकि सजल मात्रिक प्रकृति की काव्यविधा है इसलिए वर्णिक छंदों पर आधारित सजलों पर भी मात्राओं की गिनती होगी।''[19] सजलकार श्री विजय राठौर के इस वक्तव्य के संदर्भ में ध्यातव्य है कि हिंदी के सभी सजलकारों ने अपनी सजल रचनाओं में मात्रिक और वर्णिक छंदों पर आधारित ही सजलों का सृजन किया है। छंदविहीन सजलें स्वीकार्य नहीं हैं।

इसी प्रकार **'सजल, भाग–2'** में 26 प्रकार के छंदों पर आधारित सजल रचनाएँ हैं, यथा मापनीयुक्त छंद सजलें–वा॰ समानिका, वा॰ प्रमाणिका, विजात, मधुमालती, मनोरम, वा॰ महालक्ष्मी, वा॰ तोटक, वा॰ बाला, वा॰ पारिजात, वा॰ भुजंगी, आनंदवर्द्धक पीयूष वर्ष, सुमेरू, सगुण, भुजंगप्रयात, अरूण, वा॰ स्राग्विणी, सार्द्ध मनोरम, सिंधु, रजनी/राधा, वा॰ चामर, दिग्पाल, रूपमाला/मदन, गीता, वा॰ पंच यामर, वा॰ चंचला, वा सीता गीतिका, विधाता, माधव मालती, हरिगीतिका।[20]

**ब. मापनी मुक्तछंद–सजलें**–छवि (मधुधार), मलयज, एकावलि, निमोहा, चण्डिका, हाकलि, पुनीत, गोपी, पादाकुलक, श्रृंगार, चौपाई, अरिल्ल, पद्धरि, राम, तमाल, राधिका, किशोरी, रेणुका, निश्चल, दोहा, सागर, रोला, विष्णुपद, सरसी, सार, लावणी, शोकहर, ताटंक, कुकुभ, वीर/आल्हा छंद, मत्तसवैया, राधेश्यामी, तंत्री।[21]

मेरे कहने का तात्पर्य है कि हिंदी सजल का प्राण ही छंद है। चाहें वह मात्रिक है अथवा वर्णिक, बिना छंद–विधान के सजल–रचनाएँ नहीं होतीं। इस तथ्य की पुष्टि के लिए **'छंदों की लहरों में तैरती सजल–1'** से प्रथमतया एक उद्धरण देना सम्यक् होगा। विजय राठौर की 'मत्त सवैया छंद' में यह सजल रचना देखें–

''साँस चल रही है संस्कृति की, लेकिन कोई जान नहीं है!
पूर्वज की सारी सीखों का, अब कोई सम्मान नहीं हैं।।
अब फैशन की बाढ़ आ गयी, पश्चिम की चल रहीं हवाएँ!
भारतीय परिधान पहनने, में अब कोई शान नहीं हैं।।
इतना तो है आज देश की, बहुत सामरिक शक्ति बढ़ी है!
सुनो  पड़ोसी पहले जैसा, अब यह हिन्दुस्तान नहीं है।।''[22]

**–विजय राठौर : सजल–53**

इस सजल में 16+16=32 मात्राएँ हैं। इसकी दूरी पंक्ति में भी 16+16=32 मात्राएँ हैं और 16–16 पर यति है। **'मत्त सवैया छंद'** का पूर्ण निर्वाह इस सजल में हुआ है।

इसी प्रकार, **'छंदों की लहरों में तैरती सजल–2'** से सजलकार **ईश्वरी प्रसाद यादव** की **'माधव मालती छंद'** में यह सजल रचना देखें–

''तुम जरा–सा पास आओ, मैं जरा–सा पास आऊँ!
एक पग तुम भी बढ़ाओ, एक पग मैं भी बढ़ाऊँ।।
इन चढ़ावों में हमारी, यात्रा आसान होगी!
भार कुछ भी तुम उठाओ, भार कुछ भी मैं उठाऊँ।।
ज्योति की आराधना कर, दूर कर लेंगे अँधेरा!
एक दीपक तुम जलाओ, एक दीपक मैं जलाऊँ।।''[23]

**– ईश्वर प्रसाद यादव : सजल–30**

उपर्युक्त सजल में 14–14 पर यति है और कुल मात्राओं का प्रथम पंक्ति में योग 28 मात्राओं का है। इस प्रकार, यह **'माधव मालती' छंद** में सजल रची गयी है। इसी प्रकार मात्रिक छंद में 20–20 सम मात्राओं के योग की यह सजल रचना देखें–

इसी प्रकार 16+14=30 सममात्राएँ वाली एक सजल रचना को देखें–

''जीवन व्यर्थ हुआ हर पलछिन, कुछ पाने, कुछ खोने में!
मिला सुफल नवनीत वस्तुतः, सीकर–सिंधु बिलोने में।।
पता नहीं चल पाता मन की, धरती बंजर हो जाती!
उगती नहीं प्रतीति प्रीति की, बीज द्वेश के बोने में।।
कौन उन्हें दर्पण दिखलाए, सच्चाई की नित्य 'विजय'!
जीवन  की उपलब्धि निहित है, जिनकी चाँदी–सोने में।।''[24]

**–विजय बागरी 'विजय' : सजल–3**

सारतः सजलकारों की सजल–रचनाओं में छंदों का वैविध्य है। उनमें नयी–नयी लयों को सृजित करने की अद्भुत प्रतिभा है। उनके द्वारा सृजित सजल–काव्य 'छंद विधान' की दृष्टि से अत्यन्त वैविध्यपूर्ण एवं महत्वपूर्ण है। उनकी सजल रचनाओं में नयी– नयी लोकलय समाहित हैं।

**सजल काव्य की भाषा–**

डॉ॰ अनिल गहलौत जी ने इस ग्रंथ में निर्देशित करते हुए एक स्थल पर **'सजल की भाषा शैली'** शीर्षक से लिखते हुए कहा है–''सजल की भाषा में अभिधात्मक सीधी सपाट बयानी न हो। सजल में उसके कथ्य की सुसंगत प्रतीकों, सादृश्यों, रूप कों और अप्रस्तुत विधान के सहारे सांकेतिक शैली में संप्रेषित करना अपेक्षित है। सजल की शैली में वर्णनात्मकता न हो, कथ्य की प्रस्तुति में **'कहन'** की कसावट होनी चाहिए। सजल की भाषा–शैली अर्थात् उसके पदिकों की **'कहन'** में दोहे जैसी कसावट, लाक्षणिकता, सांकेतिकता व व्यंजनात्मकता होनी चाहिए। कथ्य की अभिव्यक्ति अभिधात्मक भाषा में न होकर व्यंजनात्मक भाषा होनी चाहिए। अपनी बात को सजल में प्रतीकों, बिम्बों, सादृश्यों, मुहावरों, लोकोक्तियों आदि के माध्यम से सांकेतिक भाषा में कहना होता है, तभी सजल की **'कहन'** बनती है। गीत जैसी वर्णनात्मकता तथा विररणात्मकता सजल की भाषा में अनपेक्षित है।''[25]

वस्तुतः हिंदी सजल के प्रवर्तक डॉ॰ अनिल गहलौत जी द्वारा सजल के घोषित मानदण्ड के आधार पर अगर हम सजल की भाषा का परीक्षण करें तो विदित होगा कि सभी सजलकारों ने जहाँ तक सम्भव हुआ है अपनी सजल–रचनाओं में इसका पूरा–2 ध्यान रखते हुए सजल–रचना की है। यथा, डॉ॰ अनिल गहलौत जी की ही एक रचना देखें–

''क्षीण–सी परिणाम की, सम्भावना है!
बज रहा है जो बहुत, थोथा चना है।।
देखकर आश्चर्य है सारे जगत को!
सूर्य के सिर पर चढ़ा कुहरा घना है।।
साथ वाले तो सभी कितने चतुर हैं!
पर अनिल! तुम में अभी भी बचपना है।।[26]

**–डॉ॰ अनिल गहलौत : सजल–9**

इसी प्रकार, सजलकार वीरेन्द्र सिंह 'बृजवासी' की सजल–रचना देखें–

''सत्य अब किसका कथन है?
सब दिखाने का चलन है।।
झूठ का नाटक करें सब!
कौन–सी सच्ची लगन है?
बिक चुके आदर्श 'बृजवासी' यहाँ!
रह गयी गहरी चुभन है।।''[27]

**–वीरेन्द्र सिंह 'ब्रजवासी' : सजल–9**

वास्तव में, हिंदी सजलों की यह वह काव्य–भाशा है जो पाठकों को सीधे हृदयंगम हो जाती है। एक अन्य स्थल देखें–

''कहने को तो वही नगर है बाबू जी!
किंतु हवा में भरा जहर है बाबू जी।।
इसके घर में आज करोड़ों नोट मिले!
कालेधन का जादूगर है बाबू जी!
मीठी बोली और दिखाए अपनापन!
पर अंदर से यह विषधर है बाबू जी!!''[28]

**–ई॰ सन्तोष कुमार सिंह : सजल–13**

सारतः उपर्युक्त स्थलों से स्पष्ट हैं कि हिंदी सजल की भाषा परिनिष्ठित हिंदी है जो पाठकों को सीधे ही अपने प्रभाव में ले लेती है। क्लिष्टता अथवा दुरूहता इसमें नहीं है। प्रायः सजलकारों ने अपने अनुभव एवं चिंतन के आधार यथास्थान मुहावरों, लोकाक्तियाँ और सूक्तियों के साथ आँचलिक शब्दावली का प्रयोग किया है। यथाभावानुसार काव्यभाषा की प्रस्तुति के लिए उन्होंने तत्सम्, तद्भव और देशज शब्दावली को प्रयुक्त किया है जिसके कारण उनकी काव्यभाषा अत्यधिक प्रभावी बन गयी है। निस्सन्देह, उनका 'शब्द– विधान' अत्यन्त व्यापक एवं विस्तृत है। ये सजलकार असाधारण शब्द–शिल्पी हैं।

उपर्युक्त विवेचन एवं विश्लेषण से स्पष्ट हैं कि हिंदी सजल विधा का 'कलापक्ष' अथवा 'अभिव्यंजना पक्ष' अत्यन्त सम्पन्न है। उन्होंने अपनी रचनाधर्मिता को प्रभावी, रोचक एवं संप्रेषणीय बनाने हेतु बिम्ब, प्रतीक, अलंकार, छंद–लय और भाषा–विधान की सुन्दर योजना की है। सजलकारों ने शिल्प के विविध आयामों व उपकरणों का सफलतापूर्वक समन्वय करके अपने सजल काव्य के 'कलापक्ष' को अत्यंत प्रभावी बना दिया है। यही कारण है कि सजलकारों की सजलों का 'भावपक्ष' भी निखर उठा है। निस्सन्देह, सजलकारों का 'भावपक्ष' एवं कलापक्ष परस्पर समन्वित होकर काव्यानुकूल और प्रभावपूर्ण वातावरण उत्पन्न करने में सर्वथा सफल रहा है। इसीलिए अन्य विधाओं की अपेक्षा सजल संप्रेशण की दृष्टि में आम आदमी से सहज ही जुड़ जाती है। हिंदी साहित्य की इस नयी विधा का भविष्य अत्यन्त उज्जवल है।

**संदर्भ**

1. डॉ॰ महेश 'दिवाकर', पं॰ रमेश मोरोलिया : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ0सं0–161
2. डॉ॰ नगेन्द्र, काव्य–बिम्ब, पृ0सं0–3 (प्रथम संस्करण), 1967
3. डॉ॰ चन्द्रा पंवार, नयी कविता और सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, पृ0सं0–206
4. डॉ॰ महेश 'दिवाकर', लोकधारा–6, पृ0सं0–137

5. सं॰ डॉ॰ अनिल गहलौत, 'सजल शतक–4' पृ0सं0–22
6. सं॰ विजय राठौर, सजल शतक–6, पृ0सं0–110
7. डॉ॰ महेश 'दिवाकर', सर्वेश्वर का कविता लोक, पृ0सं0–35
8. सं॰ डॉ॰ अनिल गहलौत, सजल शतक–2, पृ0सं0–63
9. सं॰ डॉ॰ अनिल गहलौत, सजल शतक–7, पृ0सं0–7
10. सं॰ डॉ॰ अनिल गहलौत, सजल शतक–11, पृ0सं0–23
11. सं॰ डॉ॰ अनिल गहलौत, सजल शतक–12, पृ0सं0–12
12. डॉ॰ महेश 'दिवाकर', लोकधारा–11, पृ0सं0–131
13. विजय राठौर, रिश्तों की तुरपाई हो, पृ0सं0–92
14. सं॰ डॉ॰ अनिल गहलौत, सजल शतक–5, पृ0सं0–111
15. डॉ॰ रामसनेही लाल 'यायावर', जलती रेत : दहकता मरूथल, पृ0सं0–23
16. रघुराज सिंह 'निश्चल', कहाँ तक चुप रहूँ, पृ0सं0–10
17. डॉ॰ अनिल गहलौत, अँधेरा हार जाएगा, पृ0सं0–53
18. सं॰ डॉ॰ अनिल गहलौत, सजल अष्टक–21, पृ0सं0–42
19. विजय राठौर, छंदों की लहरों में तैरती सजल–2' (बात सजल की), पृ0सं0–5
20. उपरिवत्, पृ0सं0–7
21. उपरिवत्, भाग–2 (अनुक्रमणिका) से साभार
22. उपरिवत्, भाग–2 (अनुक्रमणिका) से साभार
23. उपरिवत्, भाग–1, पृ0सं0–120
24. उपरिवत्, भाग–2, पृ0सं0–60
25. सं॰ डॉ॰ अनिल गहलौत, सजल शतक–2, पृ0सं0–84
26. उपरिवत्, पृ0सं0–58–59
27. वीरेन्द्र सिंह 'ब्रजवासी' : सजल–9, पृ0सं0–9
28. ई॰ सन्तोष कुमार सिंह : सजल–13, पृ0सं0–87